# संप्रदाय नहीं, मुनाफाखोरी है गोवंश की दुश्मन

उत्तर प्रदेश में बूचड़खानों को इस आधार पर बंद किया गया कि वे कानूनन अवैध थे। गोरक्षा के नाम पर हिंसात्मक कार्रवाई करने वालों को भी इसी आधार पर चुनौती दी जा रही है कि उनकी हरकत कानूनन अवैध व अमानीवीय है। गोरक्षा के लिए औजार के तौर पर मांग भी गोवंश-कत्ल पर पाबंदी कानून के रूप में सामने आई है। किंतु दुखद है कि गोरक्षा के मुद्दे पर पक्ष-विपक्ष के बंटवारे का आधार कानून अथवा मानवता न होकर, संप्रदाय व दलीय राजनीति हो गया है। हिंदू संगठन यह स्थापित करने में जुटे हैं कि हिंदू, गाय के पक्षधर हैं और मुसलमान, गाय के दुश्मन हैं। मुद्दे पर राजनैतिक दलों के बंटवारे का आधार यह है कि वे मुसलमानों के पक्षधर हैं अथवा हिंदुओं के। राजनैतिक विश्लेषक इसे गाय अथवा संप्रदाय की पक्षधरता की बजाय, वोट को अपनी-अपनी पार्टी के पक्ष में खींचने की कवायद के रूप में देख रहे हैं। मेरा मानना है कि राजनीति, राज करने की नीति होती है। इसका गोवंश की रक्षा से कोई लेना-देना नहीं है। लिहाजा, जब तक गाय पर राजनीति होती रहेगी, गोवंश की लौकिक नीति और परालौकिक रीति कभी न सुनी जायेगी और न गुनी जायेगी।

**सांप्रदायिक मसला नहीं है गोवंश का कत्ल**

शांत मन से सुनने लायक आंकड़े ये हैं कि भारत में गोवंश भी बढ़ रहा है और गोदुग्ध का उत्पादन भी। यदि कुछ घट रही है, तो बूढ़ी गायों की संख्या तथा बछड़े व बैलों की वृद्धि दर। बछड़ों और बैलों की वृद्धि दर। वर्ष – 2012 में हुई शासकीय गणता बताती है कि 2007 की गणना की तुलना में गायों की संख्या में 6.52 प्रतिशत वृद्धि हुई है। वर्ष – 2012 में गायों की संख्या 1229 लाख दर्ज की गई। आंकड़े गवाह हैं कि वर्ष 1966 से लेकर वर्ष 2015 तक सिर्फ वर्ष 1975 ही एक ऐसा वर्ष आया, जब पिछले वर्ष की तुलना में अगले वर्ष गाय के दूध का उत्पादन कम हुआ है ; वरना् भारत में गाय के दूध का उत्पादन हर वर्ष बढ़ा ही है। 69 लाख, 18 हजार मीट्रिक टन (वर्ष 1966) की तुलना में छह करोड़, 35 लाख मीट्रिक (वर्ष 2015) टन हो गया। गोदूध उत्पादन की वर्तमान वृद्धि दर, 4.96 प्रतिशत है। इन आंकड़ों से यह भी स्पष्ट है कि मुद्दा गाय नहीं, गोवंश का कत्ल है। कत्ल भी सामान्य गाय की बजाय, बछड़े, बैल और बूढ़ी गायों का ही ज्यादा है। चिंताजनक है कि बछड़े तथा बैलों की वृद्धि दर में 12.75 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई है।

अब प्रश्न आता है गोवध और गोमांस बिक्री तथा खानपान के कारण क्षतिग्रस्त होती हमारी आस्था का। प्रश्न किया जाना चाहिए कि क्या गोमांस के लिए उपलब्ध सारा गोवंश, चोरी करके बेचा जाता हैं ? नहीं, वह बिक्री करके आता हैं। अगला प्रश्न है कि गोवध के लिए बूढ़ी गायों, बैलों और बछड़ों को बेचता कौन है ? क्या गोवंश बेचने वाले सभी गोपालक, गैर हिंदू हैं ? क्या सभी गो विक्रेता, गोमांस विक्रेता, खरीददार और कत्लखानों के मालिक सिर्फ मुसलमान हैं ? नहीं, तो फिर गोवंश का कत्ल, एक संप्रदाय विशेष के विरोध का मसला कैसे हो गया ?

अत: विनम्र निवेदन है कि गाय पर राजनीति कभी भी न की जाय। इसे राजनैतिक अथवा सांप्रदायिक

वर्चस्व का हथियार बनने से सदैव रोका जाय। गोकशी करने वालों को मौत के घाट उतार देने से भी गोवंश की रक्षा संभव नहीं है। पाबंदी कानून बनाने से पहले सुनिश्चित करना होगा कि गोपालक बछड़ों तथा बूढ़े-बीमार गोवंश को कसाइयों के हाथों बेचने की बजाय, जब तक वे जिंदा हैं, उनकी सेवा करें। क्या भारत का गोपालक समाज इतना आस्थावन है कि इसकी कसम ले सके ? यह सुनिश्चित करना बेहद जरूरी है। वरना् पाबंदी कानून का उल्ट नतीजा यह होगा कि छुट्टा छोड़े गोवंश के कारण कई इलाकों में खेती करना मुश्किल हो जायेगा। नीलगायों को लेकर हमारा रवैया और उन्हे मारने को लेकर जारी आदेशों से हम परिचित हैं ही।

आज का हमारा सच यही है। क्या हम इसे नकार सकते हैं ? यदि नही तो मैं कहूंगा कि भाई, गोमांस पर पाबंदी कानून बनाने अथवा संपद्राय विशेष को जिम्मेदार ठहराने मात्र से गोवंश की रक्षा संभव नहीं है।

गांधी जी की गाय पर प्रबल आस्था थी। गांधी जी ने एक जगह कहा – "गाय के नष्ट होने के साथ, हमारी सभ्यता भी नष्ट हो जायेगी। गाय की रक्षा करो, सब की रक्षा हो जायेगी।" गोरक्षा को महत्वपूर्ण मानते हुए ही गांधी जी ने एक समय जमनालाल बजाज जैसे महत्वपूर्ण व्यक्ति को गोशालाओं की जिम्मेदारी सौंपी। इस आस्था के बावजूद गांधी ज़मीनी हकीकत से परिचित थे। अत: एक फरवरी, 1942 में गो-पालकों की सभा को संबोधित करते हुए उन्होने चेताया था – "मुसलमानों से गोकशी छुङाने के लिए उनका विरोध किया जाता है। गायों को बचाने के लिए इंसानों का खून तक हो जाता है। लेकिन मैं बार-बार कहता हूं कि मुसलमानों से लङने से गाय नहीं बच सकती।"

मेरा मानना है कि गाय को सांप्रदयिक अथवा राजनैतिक वर्चस्व का हथियार बनाने से गोवंश की भला होने की बजाय, बुरा ही होगा। मेव, वनगुर्जर, बक्करवाला, धनगड़, गडरिया, बंजारा से लेकर तमाम हिंदू-मुसलिम पारंपरिक मवेशीपालक समुदायों में से गैर हिंदू समुदाय के मन में भेद पैदा हो सकता है कि गाय तो हिंदुओं की है, वे क्यों पाले-पोसें। अलवर के मेवों ने गाय वापसी अभियान चलाकर इस विभेद का इजहार भी शुरु कर दिया है। विभेद की बेङियां, अक्सर बाधा बनकर हमारी गति रोकती रही है। इन बेङियों को काटकर ही भारत, विकास की समग्रता और गति अनवरत् बनाये रख सकता है।

**कितनी उचित, मुनाफे के आधार पर पैरोकारी ?**

बुनियादी प्रश्न है कि गोवंश का कत्ल कैसे रुके ? क्या मुनाफे का गणित बताकर यह संभव है ? याद कीजिए कि महात्मा गांधी जी ने भी गाय से मुनाफे के गणित को दुरुस्त करने का रास्ता बताने की कोशिश की थी। उन्होने अधिक दूध देने वाली गायों की बात की थी। गोशालाओं में खेती और गोपालन की शिक्षा व महत्ता बताने का भी प्रबंध की बात कही थी। अच्छे सांडों को रखने की सलाह दी थी। गोमृत्यु के बाद, उसके चमङे, हड्डी, मांस और अंतङियों का उपयोग करने की सलाह दी थी। हर गोशाला के साथ चर्मशाला की बात भी वह कहते थे। गांधी जी ने अपने आश्रम में ऐसी व्यवस्था भी की थी। गोसेवा संघ के सदस्यों के लिए शर्त थी कि वे गाय का ही दूध, दही, घी आदि सेवन करेंगे तथा मुर्दा गाय-बैल का चमङा काम में लायेंगे। किंतु सच यह है कि गांधी जी को खुद भी यकीन नहीं था कि गणित के बल पर गोवंश को बचाया जा सकेगा। इसीलिए वे यह बताना कभी नहीं भूले कि गोशालाओं का काम, दूध का व्यवसाय करना नहीं है। उनका काम सूखे, बूढ़े और अपाहिज गोवंश का पालन करना

है। मुझे लिखते हुए अफसोस है कि गोवंश के अत्यंत विद्वान पैरोकार भी आज गाय को गोधन अथवा गो सम्पदा कहकर पेश कर रहे हैं। वे हमें समझाते हैं कि गाय से प्राप्त होने वाले तत्वों में पोषक तत्व और औषधीय गुण कितने उम्दा हैं; गोवंश से हमें कितना मुनाफा है। ऐसे में यदि हमारे गोपालक, नफा-नुकसान के गणित पर गोपालन की लौकिक व्यवहार नीति तय कर रहे हैं, तो अफसोस क्यों ?

व्यवहार यह है कि ज्यादातर इलाकों में ट्रैक्टर ने बैल की जगह ले ली है। बैल-बछडे. से चलने वाले टयुबवैल हैं, लेकिन हम उसे बढ़ावा नहीं दे रहे। मुनाफे का कुल गणित दूध, गोबर, गोमूत्र और बछिया संतान पर आकर टिक गया है। गाय के कारण सकारात्मक ऊर्जा, देवत्व का भाव आदि अदृश्य मुनाफे की बातें उनके गणित में शामिल नहीं है। गाय का दूध लाख पौष्टिक हो ; दूध के दाम, वसा के मानक पर तय करने का बाजार नियम है। अधिक वसायुक्त होने के कारण, भैंस का दूध, गाय के दूध से मंहगा बिकता है। गाय कम दूध देती है ; भैंस ज्यादा दूध देती है। इसी कारण गाय सस्ती बिकती है ; भैंस महंगी बिकती है। गाय के सस्ता होने के कारण जिन इलाकों में चारागाह नहीं बचे हैं; जिन इलाकों में गेहूं जैसी चारा फसलों की खेती न के बराबर होती है ; जिन किसानों का जोर पूरी तरह नकदी फसलों पर है अथवा चारे का संकट है, वे दूध न देने के दिन आने पर गाय को छुट्टा छोड देते हैं अथवा बेच देते हैं। वे सोचते हैं कि जितने रुपया का चारा गाय-बछडे को खिलायेंगे ; दूध खरीदकर पीयेंगे, उतने में तो दूसरी गाय ले आयेंगे। कम पानी और चारे के दिनों में गाय को इंजेक्शन लगाकर मरने के लिए छोड़ देने की प्रवृति से हम वाकिफ हैं ही। मुर्गा, मछली आदि अन्य की तुलना में गोमांस सस्ता बिकता है ; इस कारण भी जिंदा गोवंश से ज्यादा मुर्दा गोवंश की बिक्री ज्यादा हैं।

सच मानिए, नफा-नुकसान के इस गणित के कारण ही बिना दूध की गायें, आज बिकने को विवश हैं और बछडे, कटने को। इसी गणित के कारण, मवेशी दूध कम दे, तो बिक्री जाने वाले दूध में कटौती नहीं की जाती, घर के बच्चे के दूध में कटौती कर दी जाती है। इसी गणित के कारण, संताने आज मां-बाप को बोझ मानती दिखाई दे रही हैं। इसी कारण हर रिश्ते का मानक नफा-नुकसान हो गया है। इसी गणित को पेश करने के कारण, पोषण करने वाली पृथ्वी के पंचतत्वों का शोषण बेतहाशा बढ़ गया है ; करोडों खर्च के बावजूद गंगा की मलीनता बढ़ गई है ; प्रवाह घट रहा है ; तो गोवंश क्यों नहीं घटेगा ? यह सबके शुभ को छोडकर, सिर्फ लाभ की परवाह करने वाला नया व्यापारिक और निहायत व्यक्तिवादी चरित्र है। इस चरित्र के रहते माताओं का संरक्षण कदापि नहीं हो सकता।

**गाय मां है, मुनाफा कमाने की कोई वस्तु नहीं**

लाख मुनाफा हो, तो भी मातायें मुनाफा कमाने की वस्तु नहीं हैं। यह परालौकिक भाव है। समझना होगा कि इस परालौकिक भाव होने पर हम पत्थर को भी पूज्यनीय मानकर, हर हाल में संजोते है। इस परालौकिक भाव ने ही सदियों से गो, गंगा, गायत्री को संजोने का लौकिक कार्य किया है। यह भाव कोई मोलभाव नहीं करता, न तर्क मांगता है ; यह सिर्फ समर्पण करता है। इसका एकमेव आधार, श्रृद्धा होता है। श्रृद्धा, विश्वास से आती है। विश्वास, व्यवहार से आता है। व्यवहार का आधार, हमेशा हमारा चरित्र ही होता है। सहअस्तित्व और सहजीवन, सिर्फ सहायक तत्व होते हैं। परिस्थिति भी, हमेशा इसका अपवाद पेश नहीं कर पाती। आज भी यह भाव पूर्णतया मरा नहीं है। सिर्फ इस भाव का ह्रास हुआ है।

हम गो, गंगा और अपनी जन्मना मां को मां मानते जरूर हैं, किंतु संतानवत् व्यवहार करना लगभग भुला दिया हैं। कटु सत्य है कि धर्मसंसदों में भी इनके खूब जयकारे हैं, लेकिन ज़मीनी सरोकार के नाम पर, सिर्फ ज़ुबानी फव्वारे हैं। संरक्षण के नाम पर खुल रही फंड आधारित गोशालाओं को हमारा 'एनजीओ चरित्र' ले डुबा है। इसका कारण न राजनीति है और न लोकनीति, यह विशुद्ध रूप से हमारे चारित्रिक और सांस्कृतिक गिरावट का परिणाम है। इसे मुनाफा नहीं, चारित्रिक शुचिता की दरकार है।

अत: गोवंश के पैरोकार, यदि सचमुच गोमाता की समृद्धि चाहते हैं, तो गणित बताना तथा राजनीति व संप्रदाय की फांस लगाना बंद करें; जीव-जीव और जीव-जड़ के परालौकिक संबंधों की शुचिता बताना और अपने व्यवहार में शुचिता बढ़ाना शुरु करें; तभी मां के प्रति हमारा व्यवहार बदलेगा ; शुचितापूर्ण संबध का संस्कार पुनर्जीवित होगा और गो, गंगा, गायत्री, पृथ्वी से लेकर हमें जन्म देने वाली माता तक की रक्षा हो सकेगी।

संपर्क
अरुण तिवारी
146, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली-110092
amethiarun@gmail.com
09868793799
.....